

महाराष्ट्र की घुमंतू वासुदेव परंपरा

डॉ. पंढरीनाथ शिवदास पाटिल, गंगामाई महाविद्यालय, नगाँव, धुले, महाराष्ट्र.

महाराष्ट्र में विमुक्त घुमंतू समुदाय की अनेक जनजातियाँ हैं। वासुदेव, वाघ्या-मुरली, नंदी वाले, ज्योतिष, वैदू, गाडिया लोहार, बेलदार, गोंधली, कासीकपड़ी, रावल, गवली, पंगुल, भराडी, कोलाटी ऐसी कई घुमंतू जनजातियाँ महाराष्ट्र में अस्तित्व में हैं। भारतीय लोककला एवं लोकधारा की पहचान वासुदेव, वाघ्या-मुरली, गोंधली, भारुड, जोगती, पोतराज आदि के माध्यम से होती है। ये लोक उपासक के रूप में जाने जाते हैं। वासुदेव पारंपरिक कलारूप है जो ज्यादातर श्रीहरि भगवान श्रीकृष्ण को समर्पित है। महाराष्ट्र में वासुदेव परंपरा सदियों से चली आ रही है। भारत में वासुदेव कृष्ण उपासकों का एक समुदाय है जो मुख्यतः महाराष्ट्र में पाया जाता है। वे उद्धार करने के लिए गाँवों और कस्बों में घूमकर भक्ति गीत गाकर लोगों द्वारा दी गई भिक्षा पर जीवनयापन करते हैं। समुदाय के कुछ लोग खेती और जानवरों का पालन भी करते हैं। वासुदेव की दीक्षा एक समारोह के माध्यम से होती है जो एक ब्राह्मण लड़के के दीक्षा समारोह के समान होती है। इसके लिए एक कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। इसमें पुजारी लड़के के कान में मंत्र बताता है, फिर वह वासुदेव समुदाय का हिस्सा बन जाता है। वासुदेव अकेले गाँव में घूमते हैं लेकिन कभी-कभी वे समूह के रूप में भी एक साथ होते हैं। वासुदेव प्रातः काल गाँव में घूम-घूमकर भक्ति गीत गाते हैं। इनकी उत्पत्ति के संबंध में कई कहानियाँ हैं। इनमें से कई पौराणिक प्रकृति की हैं। इनके अस्तित्व का पहला दर्ज प्रमाण नौवीं शताब्दी के धार्मिक ग्रंथों में मिलता है।

विख्यात प्रसिद्ध लोककवि संत तुकारामजी ने वासुदेव समुदाय पर गीतों की रचना की है। मराठी संत साहित्य में वासुदेव लोककला एवं लोकसंगीत को विशेष महत्व दिया गया है। भागवत धर्म के निर्माण एवं प्रबोधन में मानवीय चेतना एवं जनजागरूकता लाने में वासुदेव लोक कलाकार की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। मराठी वाङ्मय एवं लोकसंगीत में संतों की अभंगवाणी को व्यापक करने हेतु अनेक रूपों एवं गीतों की रचना की। इसके माध्यम से आम जनता तक विठ्ठल-रुखमायी के वारकरी संप्रदाय के विचारों को पहुँचाया जा सका। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध तीर्थक्षेत्र पंढरपुर के विठ्ठल-रुखमायी की महिमा समूचे विश्व में अभंग एवं प्रवचन, कीर्तन के माध्यम से पहुँचाई गई है। विदेशों में भी इनके परम भक्त हैं। विठ्ठल भक्ति की महिमा का गान वासुदेव गाँव-गाँव में जाकर करते हैं। संत नामदेव, संत जनाबाई, संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, संत एकनाथ, संत चोखामेळा, संत सेनानाई आदि द्वारा रचित अनेक रूपों को वासुदेव अपनी वाणी के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाते हैं। संतों की अमृतवाणी को भजन, रूपक, गोंधली गीत के माध्यम से लोगों का प्रबोधन करते हैं।

आज के सूचना प्रौद्योगिकी युग में ताल, मृदंग, बांसुरी के स्वरताल पर श्रीकृष्ण एवं पांडुरंग के रूपरंग की महिमा और लोगों से दान लेने के बाद पूर्वजों के आशीर्वाद पर गीत गाने की परंपरा आज के विज्ञान युग में लुप्त होती जा रही है। वासुदेव की प्राचीन प्रबोधन संस्था को बचाने के लिए केंद्र एवं राज्य सरकार को वासुदेव परंपरा, रीति-रिवाज एवं लोककला का संवर्धन करने के लिए ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। इस धरोहर की कला, संस्कृति क्षेत्र से जुड़ी स्वयंसेवी संस्थाओं को आगे आने की जरूरत है। आज के आधुनिक युग में वासुदेव घुमंतू समुदाय को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। यह जनजातीय समुदाय अपने मूल अधिकारों से आज भी वंचित है। घुमंतू समुदाय के विकास के लिए कल्याणकारी एवं विकास योजनाएँ कार्यान्वित करना आवश्यक है।

वासुदेव परंपरा का उद्गम- वासुदेव महाराष्ट्र की एक घुमंतू जनजाति है। यह धार्मिक एवं सहिष्णु वृत्ति के होते हैं और भिक्षा माँगकर जीवनयापन करते हैं। इनकी उत्पत्ति के संबंध में ऐसा माना जाता है कि ब्राह्मण ज्योतिष और मराठा कुणबी स्त्री की कोख से सहदेव नामक पुत्र हुआ। इसी सहदेव से वासुदेव की उत्पत्ति हुई, ऐसा वासुदेव जाति के लोगों का मानना है। इनके रीतिरिवाज भी मराठा कुणबी जैसे ही हैं। भिक्षा माँगकर ये अपना जीवनयापन करते हैं। परिवार में लड़का जब बड़ा हो जाता है तब उसका विधिवत दीक्षा-समारंभ किया जाता है। उसके बाद ही ये भिक्षा देना धार्मिक दृष्टि से पुण्य का कार्य माना जाता है। महाराष्ट्र की मराठी संस्कृति में वासुदेव की परंपरा का

इतिहास हजार- बारह सौ वर्षों से भी पुराना है। संत नामदेव, संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम के साहित्य में वासुदेव समुदाय पर अनेक पद एवं रूपक दिखाई देते हैं लेकिन संत एकनाथ महाराज ने इन संतों की तुलना में वासुदेव पर आधारित अनगिनत पदों एवं रूपकों की रचना की है। मूलतः वासुदेव घुमंतू-समुदाय कृष्ण भक्ति परंपरा की एक पिछड़ी जाति है। इनको पुराने जमाने में थुकोट नाम से भी पहचाना जाता है। महानुभाव साहित्य में इनका भीड़ी नाम से उल्लेख है। इनको हरबोला, जागाकापडी, अंतरवैदीन, कापड़ियाँ आदि नामों से पहचाना जाता है। वासुदेव महाराष्ट्र की प्राचीन परंपरा है।

महाराष्ट्र में वासुदेव के कई प्रकार अस्तित्व में हैं। इसमें वासुदेव गांदली, वासुदेव जोशी आदि प्रकार दिखाई देते हैं। प्रारंभ में इनको वाच्यदेव के नाम से जाना जाता था जो अपभ्रंश था। इनका नया रूप वासुदेव के रूप में प्रचलित हुआ है। महाराष्ट्र की मराठी संस्कृति और भक्ति परंपरा के संदर्भ में मोहन पाटील ने लिखा है कि "भारतीय हिंदू संस्कृति में लोक देवताओं की पूजा करने वाले अनेक समूह अस्तित्व में हैं। उनकी पूजा अर्चना, धार्मिक उत्सव, यात्राएँ, उनका माहात्म्य आदि श्रद्धा को उन्होंने बढ़ाया।" मराठी लोकसंस्कृति में कई घुमंतू समुदाय देवी-देवताओं की उपासना करते हैं और हिंदू सभ्यता एवं संस्कृति का प्रचार-प्रसार करते हैं। वासुदेव घुमंतू समुदाय विमुक्त घुमक्कड़ समाज का नेतृत्व करता है। सभी घुमंतू समुदाय राम, कृष्ण और विठ्ठल के परम भक्त होते हैं। महाराष्ट्र में लॉर्ड ऑफ विठोबा के सबसे ज्यादा परम भक्त एवं प्रचारक वासुदेव समुदाय को माना गया है। अपनी वाणी के माध्यम से विठ्ठल भक्ति का गुणगान करते हैं। गीत, भजन के माध्यम से जीवन के आदर्श को प्रस्थापित करते हैं। कथा गीतों में समाज की लोकमान्यताएँ हैं। संतों के रूपकों को गाकर ये जन-जन को प्रभावित कर उनका मनोरंजन करते हैं। ये चलते-फिरते ज्ञानकोश हैं। निरंतर ग्रामीण कस्बों एवं गाँवों में आने-जाने के कारण गाँव की भौगोलिक स्थिति और गाँव के छोटे-बड़े लोगों से परिचित होते हैं। लोगों में अपनी वाणी के माध्यम से समता-सद्भाव का आलेख जगाते हैं।

वासुदेव वंश उस कुल को बोला जाता है जो विठ्ठल रूखमाई या भगवान कृष्ण की धार्मिक कहानियों को मंदिर से मंदिर भटकते हुए लोगों को सुनाते हैं। वे भगवान कृष्ण की महिमा का वर्णन करने वाले सच्चे पुरुष भक्त हैं और ज्यादातर त्योहारों के दिन दिखाई देते हैं, विशेष रूप से दिवाली के समय। कृष्ण वासुदेव का यह प्राचीन पंथ भारत में सदियों से अस्तित्व में है और अभी भी महाराष्ट्र में प्रचलित है। इस कुल के हर एक सदस्य को वासुदेव के रूप में जाना जाता है। वे संगीत वाद्ययंत्र चीपल्या या खरतालों (हाथ की झांझ) की धुनों पर भजन गीतों का गायन करते हैं। इस सांस्कृतिक परंपरा का ग्रामीण क्षेत्रों में इस कुल के युवा वंशज पालन करते हैं। यह समूह या एकल वासुदेव के रूप में गाँवों और शहरों में घूमते हैं। वासुदेव के गाने विशेष ध्यान आकर्षित करते हैं क्योंकि वे या तो सामाजिक मुद्दों को उजागर करते हैं या समाज कल्याण का संदेश देते हैं। वे अपनी अलग-अलग शैली में इन मुद्दों को प्रदर्शित करते हैं जहाँ वे नृत्य के साथ-साथ इन गानों को गाते हैं। वाचिक परंपरा के द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोकगायन की यह परंपरा आज भी समाज में विद्यमान है। लंबी-लंबी कथाएँ इन्हें याद हैं। ये ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं होते। ये लगभग अशिक्षित होते हैं। घुमंतू जीवन के कारण ये न खुद पढ़-लिख पाते हैं और न ही बच्चों को पढ़ा लिखा पाते हैं किंतु भक्तिभाव और विश्वास के साथ-साथ इनकी गायकी में मनोरंजन का पुट 'वासुदेव गायन' को लोकरंजकता भी प्रदान करता है।

वासुदेव जाति में भिक्षुकी परंपरा के बारे डॉ. शशिकांत सोनवणे ने लिखा है कि "धर्मभीरू वासुदेव भिक्षावृत्ति के लिए गाँव-गाँव भटकने वाली जाति है। विशेषतया दक्षिण महाराष्ट्र में अधिक मात्रा में फैली हुई यह जाति है। एक कुनबी महिला को ब्राह्मण जाति के ज्योतिष से लड़का हुआ जिसका नाम सहदेव था। वासुदेव जाति इन्हीं सहदेव की उत्पत्ति है ऐसा कहा जाता है। ये लोक भिक्षा मांगकर पेट भरते हैं। योग्य समय पर उन्हें भिक्षा माँगने की दीक्षा दी जाती है।" महाराष्ट्र में वासुदेव समाज के कुछ लोग खेती करके भिक्षा माँगते हैं। ये सभी घुमंतू समुदाय के लोग विठ्ठल के परम भक्त हैं। विठ्ठल माऊली पर गवळणी गाकर दान माँगनेवाले लोक-कलाकार के रूप में उन्हें देखा जाता है। वासुदेव घुमंतू समुदाय ने लोक-कला के माध्यम से परमात्मा के व्यापक रूप को पहचाना और विकारों को मुक्त करके सद्विवेक मार्ग के पथ पर चलने को कहा। वासुदेव ने संतों के रूपों का एवं अभिव्यक्ति का प्रचार-प्रसार करने का दायित्व विठ्ठल भक्ति की विचारधारा के रूप में लिया है। महाराष्ट्र के पैठन के संत एकनाथ महाराज ने मुगलकाल में वासुदेव धर्म का निर्माण करके वासुदेव घुमंतू समुदाय को भागवत धर्म की विजयपताका व्यापक रूप में

फहराने के लिए तैयार किया और मुगलों के खिलाफ मराठी संस्कृति के लोगों में जनजागरूकता निर्माण में वासुदेव समुदाय ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, ऐसा भी इतिहास में बताया जाता है। महाराष्ट्र में वासुदेव परंपरा का अस्तित्व संत ज्ञानेश्वर और संत तुकाराम से भी पहले से रहा है। यह घुमंतू लोक कलाकार हैं जो सदियों से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक इस लोक कला को जीवित रखे हैं। पहले इस लोककला से वासुदेव अपना जीवनयापन कर लेते थे किंतु अब वह स्थिति नहीं रही है। यह लोककला धीरे-धीरे विलुप्ति की कगार पर है। इस लोककला के संवर्धन के लिए लोककला अकादमी व सरकार की ओर से इन्हें संरक्षण मिलना चाहिए।

वासुदेव की वेशभूषा

वासुदेव की वेशभूषा में सफेद धोती, कुर्ता, रंगबिरंगा झोला, मयूरपंख से सजी टोपी, अंगरखा, पैर में खड़ाऊ, हाथ में खरताल (चिलप्या), दूसरे हाथ में पीतल की टाल (झांझ), कमर में पावा और मंजरी वाद्य रहते हैं। गले में मोतियों की और कौड़ियों की माला, हाथ में तांबे का कड़ा, माथे पर गंध का तिलक इस तरह की वासुदेव की वेशभूषा होती है जो काफी चमक-दमक, सजीली और आकर्षित करने वाली होती है। वासुदेव की वेशभूषा के संदर्भ में प्रो. श्री. म. माटे का मानना है कि "वासुदेव कृष्ण भक्त है इसीलिए उसने श्रीकृष्ण का वेश धारण किया है।" उनकी वेशभूषा उनके प्रदर्शन की तरह आर्षक होती है। वे विशिष्ट सफेद कुर्ती, पीली, केसरिया या कलई रंग की धोती पहनते हैं और उनके माथे पर गुलाबी रंग का तिलक होता है। वे खोल के मोती से बनी माला और रुद्राक्ष माला भी पहनते हैं, उनके सिर पर मयूर पंख से सजी शंखाकार टोपी, कंधे पर लटकती गोधड़ी और हाथ में मंजीरा, चुटकुला या सारंगी, गले में गेदुआ दुपट्टा, कंबर में बंधे हुए दुपट्टे में बांसुरी रखी होती है। पैर में घुंघरू उनको और आकर्षक बनाते हैं। कुछ लोग उन्हें संत बुलाते हैं और मराठी लोग उन्हें वासुदेव नाम से पुकारते हैं।

वासुदेव परंपरा

वासुदेव लगातार गीत गाते हुए घूमते रहते हैं। खुद से कभी पैसे नहीं माँगते। जब कोई उन्हें पैसे की पेशकश करते हैं तो वे अपना झोला खोलते हैं और गाते समय इशारे से झोले में पैसे डालने को कहते हैं। वे स्वयं किसी के दरवाजे पर रुकते नहीं हैं। जब परिवार की महिला भिक्षा का कटोरा हाथ में लेकर खड़ी रहती है, उसी समय वे भिक्षा लेते हैं। भिक्षा लेते समय वे परिवार के पूर्वज का नाम पूछते हैं और उन्हीं के नाम से उनकी कीर्ति का गीत गाते हुए आगे बढ़ते हैं और आशीर्वाद देते हैं। भिक्षा में मुख्यतः इन्हें ज्वार, बाजरी, गेहूँ, चावल आदि दिया जाता है। पहले के समय जब अनाज काफी सस्ता था उस समय इन्हें सूप में अनाज दिया जाता था लेकिन अब समय के साथ परिवर्तन हुआ। अब इन्हें कटोरे में अनाज या कुछ पैसे दिए जाते हैं। भिक्षा माँगते समय वे इस प्रकार के गीतों का गायन करते हैं- भंडार भरू दे जेजेकार होउ दे।

आले पुण्य जल्माला जाउ दे।
नवनाथ ची तीन, कानिफनाथची तीन,
मच्छिन्द्रनाथ ची तीन अनभंगनाथ ची तीन
गुरुब्रह्मा ची तीन, गुरु विष्णू ची तीन ॥
रामासारखे रत्न होतील,
श्रावणा सारखे बाळ होतील, काशी नेतील।
एक नामदेवाचे, दूजे नाव माता-पिताचे।
सेवा करा माता-पिताची आली पुण्यायी जन्माची।
सकाळच्या पहात्री वासुदेवाची स्वारी सीता, सावित्रा दानकरी।
धर्म करा धर्मावरी धर्म जीवाच्या संगति।
आई केवळ लेकीला राहती सासु केवळ सुना लाजती।
संसार च्या पायी देव धर्म आठवत नाही।
संसार केले कोठा कोठी सर्व राहत धर्तारीच्या पोटी
शेवट धर्म संगति ॥

वासुदेव को भारत के आध्यात्मिक उपचारकर्ता के रूप में जाना जाता है। इस संदर्भ में नवल शुक्ल ने कहा है कि "वसुदेवा स्थाई आवास वाले किंतु भ्रमणशील चरित गायक हैं। भारतीय संस्कृति के आदर्श, उदात्त और नैतिक चरित वसुदेवा गायकी के आधार हैं। अत्यंत पिछड़ी दशा और अभाव में जीने के बावजूद भी सदियों से अपनी गायकी के माध्यम से जनमानस को शिक्षित और संस्कारित करते रहे हैं। जीवन के उच्च और उदात्त मूल्यों की रक्षा के साथ उसका पोषण और संवर्धन करते हैं।"⁴

महाराष्ट्र में पंढरपुर क्षेत्र में ज्ञान फैलाने के लिए वासुदेव अपने गायन से लोगों में जनजागरूकता निर्माण करते हैं। संगीत वाद्यों के साथ गहरी मनमोहक आवाज में भजन गाते हैं। ये मध्यप्रदेश के बुंदेलखंड, बघेलखंड, बालाघाट, छिंदवाड़ा, महाराष्ट्र के सभी अंचलों में, गोवा, कर्नाटक, गुजरात, छत्तीसगढ़ के पश्चिमांचल और उत्तरांचल में बड़ी संख्या में निवास करते हैं। मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र के वासुदेव में भिन्नता है। गायनशैली में भिन्नता के साथ ही रहन-सहन, रीति-रिवाज और लोकपरंपराओं में भी भिन्नता है। इनमें आपस में रोटी-बेटी व्यवहार नहीं होता है इसीलिए एक-दूसरे से अपने को श्रेष्ठ समझते हैं।

वासुदेव परंपरा एवं संस्कृति ग्रामीण भागों में आज भी अस्तित्व में है। वासुदेव अपने गीतों के माध्यम से तत्वज्ञान देते हैं। उसमें दैववाद होता है जिसके माध्यम से अच्छे और बुरे कर्मों के फल को ईश्वर की इच्छा समझकर स्वीकार करते हैं। वे चेहरा पढ़ने में भी माहिर होते हैं। आमतौर पर सामने वाले के स्वभाव के बारे में भी बताते हैं। इस संदर्भ में प्रभाकर मांडे ने कहा है कि "वासुदेव भिक्षा के लिए सुबह के समय रामकृष्ण का जप करते हुए लोगों के घर के प्रांगण में जाते हैं। विवाह, पाँच के लिए आशीर्वाद देने के लिए उन्हें बुलाया जाता है। इसमें कथाकथन के लिए पाँच-छह वासुदेव होते हैं। वे गोंधल के माध्यम से समाज प्रबोधन करते हैं। वे एक विशिष्ट लय में पांडुरंग के गीत गाते हैं। इन गीतों में संवाद-योजना होती है। यहाँ वासुदेव वादक एवं गायक रहता है। नर्तक और कथाकार वही होता है अर्थात् हुन्नरी कलाकार होता है।" वासुदेव लोककलाकार के रूप में समाज का प्रबोधन करता है। इनका सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक उत्थान में उल्लेखनीय योगदान रहा है। महाराष्ट्र में लोकसंस्कृति एवं लोकधारा को कला के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाने वाले एक समूह के रूप में वासुदेव समुदाय की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इस संदर्भ में डॉ. रा. चिं. ढेरे का मत है कि "वासुदेव यह एक व्यक्ति न होकर एक संस्था है अर्थात् लोकसंस्कृति के क्षेत्र में पूरा का पूरा भागवत संप्रदाय है।" वासुदेव अपने गीतों में कृष्ण चरित्र, कृष्ण भक्ति का गुणगान, प्रपंचनीति, वेदांत जैसे विषयों पर सीधी-साधी बोली भाषा में गीत गाता है। महाराष्ट्र में लगनेवाले मेलों, यात्राओं और उत्सवों में वासुदेव के इलाके में गए तो दान माँगते समय मोरपंख की टोपी नहीं पहनते हैं। वासुदेव वर्ष में एक बार अपने क्षेत्र के गाँवों में भिक्षा माँगने जरूर जाते हैं।

छत्रपति शिवाजी महाराज के काल में वासुदेव समुदाय की भूमिका

वासुदेव घुमंतू समुदाय की सहायता से महाराष्ट्र के शासक वीर छत्रपति शिवाजी महाराज ने अपने 'मावळे' के घर पर संदेश भेजने के लिए वासुदेव का उपयोग किया था। उस समय उन्होंने गुप्तचर की भूमिका निभाई थी जिससे शत्रुओं के खेमे में जाकर उनकी गतिविधियों की जानकारी महाराज तक पहुँचाई जा सके। भारतीय स्वराज्य में उनकी निर्णायक भूमिका रही है। मराठा शासक छत्रपति शिवाजी महाराज एवं कई वंशों के शासकों ने वासुदेव का उपयोग गुप्तचर के माध्यम से किया है। वासुदेव आसपास के राज्यों की गुप्त जानकारियाँ अपने राजाओं तक पहुँचाते थे। महाराष्ट्र और कर्नाटक राज्यों के राजवंशों के लिए जानकारी प्राप्त करने के स्रोत के रूप में वासुदेव ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

महाराष्ट्र के संतों के साहित्य में वासुदेव का महत्व

महाराष्ट्र के मराठी संतों ने वासुदेव घुमंतू समुदाय पर बड़ी मात्रा में चिंतन सृजन किया है। संतों ने अपने अभंग की रचना करते समय व्यक्ति चित्रणात्मक स्फुट एवं रूपक लेखन को विकसित किया है। मराठी के प्रख्यात संत शिरोमणि नामदेव ने वासुदेव पर कई रूपक लिखे हैं। संत ज्ञानेश्वर ने संस्कृत में लिखित भगवद्गीता को मराठी में ज्ञानेश्वरी गाथा के रूप में लिखा है। इस समय उन्होंने कई अभंगों की रचना की है, इसमें वासुदेव के जीवन पर आधारित अभंग रूपकों का निर्माण किया। संत तुकाराम ने भी वासुदेव पर आधारित कई अभंगों का निर्माण किया है।

इन संतों के बाद पैठन के संत एकनाथ ने व्यक्तित्व को सामने रखकर भारूड रूपकों का निर्माण किया। इसका निर्माण करते समय सर्वत्र संचरण करने वाले व्यक्ति की पारंपरिक विविधता से नटखट वासुदेव परमात्मा की भक्ति की महिमा का कथन करता है। ऐसा परिदृश्य संत एकनाथ ने अपने अभंगों में निम्न प्रकार से व्यक्त किया है-

मी वासुदेव नामे फोडितों नित्य दाहो।
देखिले पाय आता मागतो दान धा हो।
सावळे रूप माझ्या मानसी नित्य राहो।
पावन संत वृंदे सादरे दृष्टी पहाटे ॥ 1 ॥
संत रामकृष्ण वासुदेवा हरि रामकृष्ण वासुदेवा धृ॥
सांडोनी सर्व चिंता संतपदी लक्ष लागो।
भक्ती भी सर्वसंगी सर्वदा वृत्ती जागो।
भाविक प्रेमळाच्या संगती चित्त लागो । ॥ 2 ॥
अद्वैतेची चालो अक्षयी भक्तियोग ।
स्वप्नीही मानसाने नातळो द्वैतसंग ।
अद्वैयानंदवेधे नावडो अन्य भोग।
अक्रियात्वची वाहो सक्रिय रूप बोध ॥ 3 ॥

इस प्रकार वासुदेव लोकसंस्कृति का उपासक होता है और परमात्मा भक्ति का संदेश आम आदमी तक पहुँचाता है। संत एकनाथ के भारूड के संदर्भ में डॉ. रामचंद्र देखने ने कहा है कि "वासुदेव की वेशभूषा उनके प्रबोधन कार्य के अनुरूप होती है। दुर्बुद्धि को त्यागकर बुद्धिरूपी मोरपिसा टोपी पहन ली है। ज्ञान पूर्ण है यह, पूरे विश्व को व्यापने वाला है इसीलिए उसने पूरे ज्ञान का अंगरखा चढा लिया है। देवी-देवताओं की चिपली हाथ में ली है। सात्विकता के प्रतीक के रूप में गले में माला, हाथ में मंजीरी बंधी रहती है। ब्रह्मनाद की मंजीरी वह बजाता है और संतों के घर में भोग नीचे डालकर त्याग का दान नाथ उन्हें माँगने के लिए लगाता है।" संत एकनाथ के व्यक्तित्व चित्रण में भारूड में अंधे, लूले, लँगड़े, बहरे, मुक्का, पीसा आदि की व्यक्ति रेखाएँ चित्रित होती हैं। संत एकनाथ की भारूड रूपक परंपरा को बहुजन समाज के संतों ने वासुदेव परंपरा को जीवित रखा है। इनमें संत चोखामेली, संत सेनानाई ने भी वासुदेव पर अभंग लिखे हैं।

वासुदेव की लोकसंस्कृति एवं परंपराएँ

मराठी संस्कृति में वासुदेव लोकसंस्कृति का उपासक होता है। इसमें देवी-देवताओं की उपासना की जाती है। वासुदेव की लोकसंस्कृति महाराष्ट्र राज्य की एवं देश की सांस्कृतिक धरोहर है। मध्यभारत से लेकर दक्षिण भारत तक इस संस्कृति का निवास रहा है। महाराष्ट्र में अनेक संस्कृतियों का समागम मिलता है। इसमें वासुदेव की लोकसंस्कृति एवं परंपराएँ महत्वपूर्ण हैं। वासुदेव की लोकसंस्कृति आदिम लोकसंस्कृति का अविभाज्य अंग माना जाता है। कई सदियों से यह परंपरा अस्तित्व में है। महाराष्ट्र के तीर्थक्षेत्र पंढरपुर में विठ्ठल-रुखमायी की यात्रा प्रतिवर्ष आषाढी एकादशी के दिन रहती है। उस समय लाखों भक्तगण पूरे विश्व से आते हैं। इस यात्रा में वासुदेव विठ्ठल भक्ति का जयघोष करते हुए अखंड कीर्तन करते हैं। वासुदेव हरिनाम का जप करते हुए विठ्ठल माऊली की महिमा का गान करते हैं। वासुदेव समुदाय की पांडुरंग के अलावा माहुर की रेणुक माता, खंडोबा, म्हसोबा, मांडरादेवी आदि देवी-देवताओं को पूजनीय मानते हैं। अपने परिवार में इन देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। महाराष्ट्र में कई स्थानों पर देवी-देवताओं की प्रतिवर्ष यात्राएँ होती हैं, इसमें वासुदेव समुदाय सम्मिलित होता है प्रतिवर्ष मराठवाडा के औरंगाबाद जिले के लासुर नामक गाँव में दाक्षायनी देवी की चैन महीने में बड़ी यात्रा होती है। इस यात्रा के लिए वासुदेव समुदाय बड़ी मात्रा उपस्थित होता है। चैत्र महीने में उनके परिवार के लोग नौ दिन का माताजी का उपवास करते हैं। सातारा जिले के वार्ड प्रांत में मांडरा देवी की यात्रा होती है जहाँ प्रमुखता से वासुदेव समुदाय जाता है। वर्धा जिले के रोठा गाँव में

राणूबाई देवी की यात्रा होती है। यहाँ भी दूर से वासुदेव समुदाय एकत्रित होता है। वासुदेव अपने क्षेत्र में जाकर इस प्रकार के गीत गाते हैं।

"गातों वासुदेव मी एका। चित्त ठेवुनि ठायी भावे एका।
डोळे झाकुनि रात्र करू नका। काळ करीत बैसला लेख गा॥1॥ ॥धृ॥
श्रामाराम स्मरा आधी। लाहो करा गांठ घाला मुळबंदी।
सांडवा उगिया उपाधी। लक्ष लावूनि राहा गोविंदी गा॥धृ॥
ऐसा अल्प मानवी देह। शत गणिले अर्ध रात्र खाया।
पूढे बाल पीडा रोग क्षया। काय भजनासि उरले ते पाहेंगा॥2॥
क्षणभंगूर नाही भरवसा। द्वारे सावध सोडा माया आशा।
न चळे बळ पडेल मग फासा। पूढे हुशार थोर आहे वोळसागा॥3॥
काही थोडे बहुत लागपाठ। करा भक्तिभाव घरा बळकट।
तनमन ध्यान लावुनिया नीट। जर असेल करणे गोड शेवटगा॥
विनवितो सकळां जनां। कर जोडुनि थोरा लाहना दान इतुले द्या मज दीना।
म्हणे तुक्या बंधू राम म्हणे गा॥5॥

इस भारूड में वासुदेव कहता है कि आप ध्यान देकर सुनिए। आँख बंद करके बैठने से कोई फायदा नहीं है क्योंकि काल हमेशा हमें दबोचने के लिए तत्पर रहता है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, वैसे-वैसे हम उम्र के अंतिम पड़ाव पर पहुँच जाते हैं अर्थात् मृत्यु के करीब जाते हैं। इसीलिए राम राम का स्मरण करते रहना चाहिए। तुकाराम के इस भारूड में वासुदेव रामभक्ति का दान माँगते हुए घूम रहा है।

वासुदेव समुदाय की समस्याएँ -

वासुदेव भ्रमणशील जाति है और इनका स्थाई निवास नहीं होता। जिस गाँव में रहते हैं, जहाँ इनका निवास होता है, उसे छोड़कर ये भिक्षाटन में निकल जाते हैं। भिक्षाटन की अवधि चार माह की होती है। तब ये घर से दूर होते हैं। ऐसी स्थिति में देखरेख के अभाव में इनका आवास जीर्ण-शीर्ण हो जाता है। यह स्थिति हर साल होती है, इसीलिए इनका मकान कच्चा होता है। छोटे से स्थान पर पूरा परिवार सीमित साधनों में गुजर-बसर करता है। सुविधाओं का अभाव होता है। गाँवों में स्थिति तो कुछ अच्छी है क्योंकि यहाँ उपलब्ध साधनों से उन्होंने अपनी स्थिति मजबूत कर ली है। वासुदेव घुमंतू समुदाय की नई पीढ़ी शिक्षित होकर शहरों की ओर पलायन कर रही है जिससे प्राचीन वासुदेव परंपरा विलुप्ति के कगार पर है। शासन की ओर से घुमंतू समुदाय को जो सुविधाएँ दी जाती हैं, उनका लाभ वासुदेव समुदाय को नहीं मिल पाता है। आज के आधुनिक युग में वासुदेव घुमंतू समुदाय को कई समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। यह जनजातीय समुदाय अपने मूल अधिकारों से आज भी वंचित है। घुमंतू समुदाय के विकास के लिए कल्याणकारी एवं विकास योजनाएँ कार्यान्वित करना आवश्यक है।

निष्कर्ष -

भारतीय संस्कृति को समृद्ध करने में भ्रमणशील समुदाय का बड़ा योगदान रहा है जिन्हें घुमंतू जनजातियों के नाम से पहचाना जाता है। संस्कृति की पोषक ये घुमंतू जनजातियाँ हमारी परंपराओं की संचारक हैं जो दान, धर्म, सत्यवादिता का संदेश देती हैं, साथ ही वहीं लॉर्ड ऑफ विठोबा की कथा कहकर दानशीलता व मातृ-पितृ भक्ति की प्रेरणा देती हैं। नैतिक मूल्यों एवं परंपराओं के महाराष्ट्र के वासुदेव मूलतः भागवत धर्म एवं वारकरी संप्रदाय के गायक हैं। अपने घुमंतू जीवन में लगभग सभी वासुदेव समुदाय विठु माउली के परम भक्त हैं। यह क्षेत्र देश के मध्य में है। यहाँ भारत के उत्तर और दक्षिण की सांस्कृतिक चेतना का संगम हमेशा रहा है। वासुदेव परंपरा उत्तर से दक्षिण क्षेत्र में विकसित हुई है। यह प्रंपरा आज के आधुनिक युग में महाराष्ट्र में पाई जाती है। वासुदेव परंपराओं ने भारतीय लोकसंगीत एवं लोककलाओं को विकसित किया है तथा लोककलाओं के माध्यम से महाराष्ट्र को एक साथ जोड़ रखा है। महाराष्ट्र के भक्ति आंदोलन एवं सामाजिक सुधारों की विचारधारा को वासुदेव परंपरा ने गतिमान किया है।

प्राचीनकाल से मध्य काल तक वासुदेव घुमंतू समुदाय ने दक्षिण के कई वंशों एवं राजाओं को सूचना एवं जानकारी देने के स्रोत के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। महाराष्ट्र के मराठा शासक छत्रपति शिवाजी महाराज के स्वराज्य निर्माण में गुप्तचर के रूप में वासुदेव का उल्लेखनीय योगदान रहा है। वासुदेव का महाराष्ट्र की ग्राम संस्कृति में एक विशेष स्थान है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

संदर्भ सूची-

1. मोहन पाटील : लोक साहित्य, लेख-आलेख, पद्यगंधा प्रकाशन, पुणे प्रथम संस्करण 2012, पृ.33-34
2. डॉ. शशिकांत सोनवणे : भारत की उपेक्षित लोक संस्कृतियाँ (महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के साथ उपेक्षित समुदायों के परिप्रेक्ष्य में), अभय प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण 2014, पृ.80
3. प्रा. श्री. म. माटे : मराठी विश्वकोश : खंड 16 प्रमुख संपा- में. पु. रेगे (वाद्य वृंद ते विज्ञान), महाराष्ट्र राज्य मराठी विश्वकोश निर्मिती मंडल, मुंबई, प्रथम संस्करण 1999, पृ.114
4. नवल शुक्ल : लोकगायक बसदेवा, 'चौमासा' पत्रिका, मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद् एवं संस्कृति विभाग, भोपाल, अंक 32 जुलाई-अक्टूबर 1993, पृ.48
5. डॉ. प्रभाकर मांडे : लोकगायकांची परंपरा, गोदावरी प्रकाशन, औरंगाबाद, प्रथम आवृत्ति 2011, पृ.68
6. डॉ. रा. चिं. ठेरे : मराठी लोकसंस्कृतिचे उपासक, पद्यगंधा प्रकाशन, पुणे प्रथम संस्करण, 1964, पृ.13
7. डॉ. रामचंद्र देखणे : भारूड और लोकशिक्षा, पद्यगंधा प्रकाशन, पुणे, प्रथम संस्करण, 1965, पृ.36